आखर हिंदी पत्रिका e-ISSN-2583-0597 खंड 3/अंक 3/जून 2023
Received: 12/05/2022; Accepted: 15/06/2022; Published: 24/06/2022

पुस्तक समीक्षा

शब्द बहुरूपिये हो गए

डॉ. संगीता श्रीवास्तव
वाराणसी

डॉ. संगीता श्रीवास्तव, **शब्द बहुरूपिये हो गए**, आखर हिंदी पत्रिका, खंड 3/अंक 3/जून 2023,(360-368)

डॉ मुक्ता एक विराट फलक की कवयित्री हैं। वह किसी एक स्तंभ, संप्रदाय या किसी विशेष वर्ग से नहीं जुड़ी हैं उनकी कविताओं में कहानियों की तरह ही वैविध्य है। ऐसा नहीं है कि उन्होंने सिर्फ स्त्री पर हो रही घटनाओं को या स्त्री की जटिलताओं को या जीवन में उसकी उपयोगिता को ही अपनी कविताओं में रेखांकित किया है। उनकी कविताओं में स्त्री तो है ही साथ ही समाज के उपेक्षित और पीडित वर्ग , मजदूर, किसान, ढफली वाला आदिवासी , प्रेमिकाएं, पुरखों का घर, माँ और पिता की स्मृतियाँ हैं, देश भक्ति है तो वसंत राग भी है, बच्चों की आवाजें हैं, वीणा के तार भी जीवन राग है तो कोरोना काल की संवेदनाएं भी हैं, तो रिश्ते, एकांत, शब्द, आभासी दुनिया, अहमद अली, युद्ध और धूप के टुकड़े भी हैं।

उससे महत्वपूर्ण बात यह है कि यह जितनी बाहर से सरल सहज दिखती हैं उतनी ही सहज उनकी कविताएं भी हैं जो गूढ अर्थ लिए हुए यथार्थ का चित्रण करती हैं। उनका रचनाकार मन केवल प्रशस्त संवेदना उसे पूरित मन है। उन्होंने कविताओं के रूप में जो कुछ गुना है उसकी बनावट भी काफी महीन और बारीक है। उनकी संवेदना का एक सिरा स्त्री जीवन को छूता है तो दूसरा जिंदगी के उन पहलुओं को भी समझता है जहां स्त्री-पुरुष का भेद मिट जाता है। वे संवेदना के इन दोनों छोरों को एक लय में संभाल और साध सकी हैं।

पुरुष वर्चस्व की सामाजिक संरचना के चलते सदियों से स्त्री के शरीर और मन पर जो गहरे और गाढे निशान अंकित होते रहे हैं, उन्हें उनकी टीस और दंश के सारे एहसासों के साथ कवयित्री ने स्वर और रूप दिया है। उन्होंने हमेशा जिंदगी को उसके बड़े परिप्रेक्ष्य देखने की कोशिश की है। स्त्री वजूद से आगे उनकी जटिलताओं और विसंगतियों को उन्होंने उजागर किया है।

वे किसी घटना, मनोदशा मनोभाव के तह तक, अंतर तक, मन तक जाकर वहां से जुड़ती हैं। वे जमीनी जुडाव रखती हैं और अपनी कविताओं में उन्हें सम्मिलित करती है। वे कल्पना या गल्प में नहीं जीतीं वे यथार्थ का सजीव और जीवंत चित्रण करती हैं।

छोटे से छोटे परिदृश्य को अपने शब्दों के माध्यम से जीवन के राग- विराग- अनुराग को कविता का रूप देने की कला और मुखर शैली मुक्ता जी को अलग पहचान देती है । उनका संवेदित मन अंतर्मुखी भी है और बहुमुखी भी। उनकी एक दृष्टि बाह्य जगत की ओर होती है तो दूसरी तरफ मन की ओर। मन की राहों को उसकी जटिलताओं को ढूंढती है और उस से रूबरू होती है । वे सीधे समय से जुड़ती है उससे आंखें मिलाती है और उसकी क्रूरता से साक्षात्कार करती है समय जिसने आज तक उसको एक बाजार में बदल दिया है खुदगर्जी लाभ लोग लालच भौतिक सुख कभी न खत्म होने वाली हवा संवेदन शून्यता आज नियत का क्षरण इस समय की अपनी खास पहचान है जिस को रेखांकित करते हुए उनकी अनेक कविताएं है जितना कहती है उससे कहीं ज्यादा अनकहा छोड़ देती है जो मन में देर तक बुदबुदाता रहता है और मन को सालता रहता है।
उनके पास अनुभव और अध्ययन की पूंजी है। अध्ययन का अर्थ ज्ञान की पूंजी से है जो उन्होंने जी कर और भोगकर अर्जित किया है और बहुत कुछ आचार्य शुक्ल जी की विरासत में पाया है।
इस अर्जित पूंजी में इतिहास, पुराण, मिथक और लोक जीवन के नाना रंग रूप शामिल हैं।
जिसके कारण वे सुदृढ़ और मुखर होकर कलम चलाती रहीं कहीं विचलित नहीं होती।

"शब्द बहुरूपिये हो गए" कविता संग्रह में लगभग 101 तक की कविताएं हैं, जो विविध रूपों में संग्रहित है । बहुरूपिया का अर्थ ही बहुत रूपों में होता है। 'शब्द' विभिन्न रूपों में भावप्रवणता के साथ परिवर्तित होते चले जाते हैं बदलते चले जाते हैं ।
उनकी कविताओं में स्त्री विवशताओं, सामाजिक गतिविधियों पर कुठाराधात करती राजनीतिक चेतना के तेवर हैं । मां और पिता की स्मृतियां भी हैं एक आदिवासी की पीड़ा भी है, काशी का बदलते जाना भी है और एक लड़की का ऑटो में जाना भी है।
हंसती औरतों के पीछे सच क्या है इसका खुलासा करती कविताएं भी है।
संग्रह की पहली रचना ही मानव के उद्गम स्रोत अर्थात पीड़ा। स्त्री की पीड़ा 'प्रसव' है -

मैं तुम्हें बताना चाहती थी वह रहस्य
जो केवल भूमि की तह में
बसी लहरों को ज्ञात था
समुद्र में विलय से पहले
लहरें लौट आना चाहती थीं
- अपने शिवत्व में
लहरें लौट न पाई ----
एक नाभिकीय आकर्षण
शिशु रूप में छलता रहा निरंतर
वह हंसता

खिलखिलाता ओझल- विलीन
पुनः रूपांतरित हो
स्वप्न आकार करता रहा ग्रहण
अदम्य राग -- झंझावात बन
धरित्री की ओर बढ़ चला
आरंभ हो चुका था
पीड़ा का निचाट विस्तार
समर अभी शेष था
देह शिशु बढता आ रहा था
तिमिर से शनै शनै उजाले की ओर

किस तरह से शिशु का जन्म होता है और यह प्रसव की पीड़ा कैसी होती है इसका बखूबी वर्णन इन्होंने किया है। कवयित्री जितना लिखती हैं उससे कहीं ज्यादा छोड़ देती है सोचने, समझने और गुनने के लिए।

'ढफली बजाता आदमी' यह कविता आदिवासियों के विस्थापित हो रहे जीवन पर चित्रित है कि किस तरह जंगल कट रहे हैं और वे आदिवासी जंगल से विस्थापित हो रहे हैं। वह घर के उजडने से दुखी हैं।

एक अन्य रचना है -

'नस्ल बदल रही है'

बड़ी अच्छी रचना है। पुराने समय में जब कोई दुर्घटना हो जाती थी तो लोग उसके विरोध में खड़े होते थे लेकिन अब लोग घटनाओं का ही साथ देने लगे है।

सृष्टि के सृजन से आरंभ से लेकर आज तक में व्यक्ति में कितना परिवर्तन हो गया है कि व्यक्ति एकदम संकुचित संवेदनाओं से परे और आत्म केंद्रित हो गया है।

धुए का असर होने लगा है
धीरे-धीरे बदल रही है
आदमी की नस्ले
विरोध में उठते थे हाथ हत्या के
विरोध में उठते थे हाथ हत्या के
हत्या के पक्ष में उठने लगे हैं।

'धूसर आईने' राजनैतिक चेतना की कविता है-

कुछ हाथों में आईने है धूसर
देख रहे हैं अपने चेहरे
गढ रहे हैं परिभाषाएं आजादी की
सड़कों पर खोए हैं नींद में
गड़बड़ हो रही है मुट्ठिया

उल्टा लटका है बारूद का पेड़
फैलती जा रही है गंध
समझना होगा
आजादी और आजादी का अर्थ।

कम शब्दों में अपनी बात कहने की जो कुशलता कवयित्री में है वो कम दिखाई देती है।

इसी तरह की कई कविताएं है – आवाज, पृथ्वी की सबसे उदास लड़की,

निशान, भूख के उठे हुए हाथों के साथ, औरत, आर्ट गैलरी, प्रेमिकाए,एकांत, रिश्ते, औरत और नमक।

पोस्टर नामक एक धारदार कविता है -

वे रचते जा रहे हैं नए चक्र
जिनके अक्स पोस्टरों में अधिक चमकदार हैं
उस दौर के पहिए उलटकर
घूमने लगे हैं गोल गोल
हमारे घरों के चारों ओर।।

'देखन में छोटे लगे घाव करे गंभीर' कहावत को चरितार्थ करती है।

एक अन्य कविता है –

'समुद्र की शक्ति के साथ औरत' --

सूर्य के ताप से दरकती भूमि
बारिश की बूंदों से
महक उठती है सोंधी सोंधी

उपजाऊ जमीन में –

अंकुरित होता है गेहूं
रोटी की अपनी गूंज होती है

पुरुषों की दुनिया में -

औरत
धरती और समुद्र की
शक्ति के साथ
अपने श्रम के पसीने को धारण कर
खड़ी है मजबूती के साथ।।

इस तरह की अन्य कविताएं हैं- मूक यात्रा,मंत्र आंचल में सेब, परिक्रमा,इतिहास गवाह है,औरत चुनौती है,अजगर,वक्तव्य, शब्द,मजदूर आदि अनेक छोटी लेकिन मारक रचनाएँ हैं।

कविता - 'लड़कियां'

यह जन पथ है
या ज्ञानपथ है
मां की माँओ के
हाथ में थी मशाल
मां के हाथ में थी
मशाल लड़कियों ने बदल दिया है
हाथों को मशाल में
लड़कियां बढ़ रही हैं
नई विहान की ओर।।
आशावादी और सकारात्मक कविता है।

एक कविता है - 'सनद रहे'

नए परिदृश्य की कविता है जिसमें सन् 2020 में घटी घटना है। गार्गी कॉलेज दिल्ली में अराजक लड़कों ने कॉलेज के आयोजन में लड़कियों के साथ अशोभनीय हरकतों पर आधारित है, जिसमें लड़कियों ने सामूहिक रूप से इस बात का विरोध किया था।

कविता की चार पंक्तियां

लडकियों सनद रहे !

उठे हाथ --- गिरे नहीं

इस बार वे हथियार सुसज्जित होकर आए हैं
हाथों को बदल देना मजबूत जंजीरों में
उपकरण बदले हैं
समय नहीं
काल खंडों की हर शीला पर
तुम्हारे हस्ताक्षर होंगे
लड़कियां तुम्हें नहीं देनी है अग्नि परीक्षा
कालजयी धनुष इस बार तुम्हारी परिधि में है।

इससे पता चलता है कि कवयित्री कितनी जागरूक सजग और चैतन्य हैं। अपने समाज में हो रही संवेदनाओ के प्रति। इसी तरह की और भी अनेक कविताएं हैं - ऑटो में बैठी लड़की, हंसती हुई औरत

पीड़ा का घनेरा घन।

एक कविता है -

'कमलिनी खिलने से पहले'

बिछाकर इंद्रधनुषी चादर

तुम अस्त हो जाते हो
रात के अंतिम प्रहर तक
मौन शब्द सन्नाटे में रहते हैं
तुम्हारे प्रेमिल स्पर्श
समेट लेते हैं मुझे आलिंगन में
बार-बार तितिक्षा से विदीर्ण मन में
उठता है एक ही प्रश्न ---
उलझी रहूॅ या रिक्त हो जाऊं
कमलिनी खिलने से पहले
प्रिय भेज देना एक संकेत।।

एक दूसरा पक्ष राजनैतिक परिदृश्य का है जिसमें करारा व्यंग्य और तेवर है कि शासन के हाथों किस तरह समाज कठपुतली की भूमिका अदा करने पर मजबूर हो रहा है। कुछ पंक्तियां देखिए-- 'कठपुतलियां' कविता से --

कठपुतलियों के मुंह के यंत्र में भरी हुई है आवाज
होठ हिलाती है बखूबी
रंग बिरंगी कठपुतलियां
लोक में प्रचलित कठपुतलियों के किस्से पुराने हुए
कठपुतलियों का नृत्य
अब आकाशीय मंच से नहीं होता संचालित
तंत्र की उंगलियों में
अंगूठी बन नाचती रहती है कठपुतलियां।

निशान भूख के, उठे हुए हाथ, लोकतंत्र, मजदूर, इतिहास गवाह है, किसान आंदोलन 2021, खेत के बीच बदलना होगा।

सारे परिदृश्य में कवयित्री कहीं हताश, निराश और संवेदना शून्य नहीं होतीं बल्कि हौसला देती हैं जो आशा उत्साह और उम्मीद से भरपूर है।

'जीवन' एक कविता है--

यह जो जीवन है
ऐसा ही है
थोड़ा मीठा थोडा कडवा
काॅफी जैसा
एक घूंट आस्वाद
अंतहीन मुखर संवाद
उत्सुक है भविष्य द्वार

विश्राम है पथिक - गंतव्य नहीं
यह मनोमयी रंगशाला
उठो संधान करो
नए प्रातः की मधुकशा में
प्रयाण करो।।।।

कलमकारों के लिए लिखी कविता 'कलम' -

कलम मशीन नहीं बन सकती
रचनाकार की देह का हिस्सा है कलम
शब्द और शब्दों के पार
कलम की जय-यात्रा में शामिल है पूरा विश्व।

कुछ कविताए स्मृति स्वरूप भी हैं जैसे पिता, माँ तुम्हारी छाया में ।

कवयित्री ने अपने शहर काशी पर भी अनेक कविताएं लिखी हैं जो काशी के सनातनी और वर्तमान परिदृश्य को चित्रित करती हैं ।

'बनारस आज' - राजनैतिक चेतना की कविता है जिसमें कवयित्री ध्वस्त होते मंदिर, मोहल्ले, महान ऐतिहासिक भवन, व्यावसायीकरण, गंगा के विभाजन की दशा, विश्वनाथ गली की रौनक, चूड़ियों की खनक, गली से गुजरते श्रद्धा भाव से आते जाते दर्शनार्थी , शिव शिव का नामोच्चारण , गली के टूटने से दुकानवालो की मनोदशा आदि संवेदनाओं का बखूबी चित्रण किया है-- कुछ पंक्तियाँ- --

त्रिशूल पताकाएं गुंबद
मढ दिए गए स्वर्ण से
रुद्राक्ष --- हीरे के कवच से
बाबा विश्वनाथ औघढ दानी के दर्शन हो गए दुर्लभ
काशी जा रही है किस करवट
कौन कहे कौन बताए
सिद्धि अडियों के मुहाने
व्यवस्था कलश से बिद्ध हैं
काशी जन के नाभिनाल से जुड़ा
बना रहे बनारस।।।।

कवयित्री काशी के आज बदलते माहौल से दुखी हैं। व्यावसायिकरण से परेशान है। व्यवस्था के चाल चलन से नाखुश हैं फिर भी चाहती है कि काशी जन के नाभिनाल से जुडा रहे बनारस।

पक्का महाल और टुकनी देवी कविता कुठाराधात करती है शासन व्यवस्था पर। लंबी कविता है मुझे लगता है ये कविता विश्वनाथ कॉरीडोर बनने के समय लिखी गई है---

शुरू हुआ तांडव बुलडोजर का

कालखंड से लुक्त हुए
अनेक ऐतिहासिक भवन—मंदिर
बिखर गए नुचे पंख तोते के
खंडन मिश्र की विरासत हो गई असहाय---- मूक
अब ना कहीं शंख
न घड़ियाल
भाएं भाएं -- सन्नाटा पसरा हुआ है चहुँ ओर
झुकी पीठ डगमग चलती है टुकनी देवी
यात्रा अभी थमी नहीं -----।।

काशी में अपना संपूर्ण जीवन बचपन से वर्तमान तक का सफर तय करने वाली काशी के रंग में रच बस जाने वाली सनातनी परंपरा से वर्तमान व्यवसायीकरण की साक्ष्य रहने वाली कवयित्री 'ओझल हो गई काशी' कविता में काशी और काशी जन की पीडा , स्थितियों और संवेदना को दर्शाती हैं --

कथा बन गए
पक्के महाल के ऐतिहासिक भवन
काशी गंगा के अंक में अपने विगत आलोक की
दीप्ति में कहीं गुम है -
मिथकों में जीता शहर-- आज प्रतीत होता है मिथ जैसा
आज काशी जिसका नाम बनारस है
खींचा नक्शा है बनारस की अनुकृति की तरह
शहर बनारस को जैसे रख दिया गया हो तहाकर गंगा में
बनारस पुनः उठेगा
भैरवी के सुरो में जगता हुआ
अपने घाट की सीढ़ियों पर
एक-एक डग भरता हुआ।।

मुक्ता जी कविताएं विविधतापूर्ण हैं। वे करोना काल के समय में भी भयग्रस्त नहीं रहीं बल्कि इस लाकडाऊन में परिस्थितियों के उतार चढ़ाव पर शोध करते रहीं, गुनती रहीं सामाजिक मनोभावों और संवेदना के नए नए पैमानों को और तत्कालीन समय में सजग और चैतन्य रह कर कविताएं लिखीं। ऐसे समय में, कितने ही लोग, सन्नाटे का जाल, लौट रहे हैं पंछी, सनद रहे, मंगलेश जी नहीं रहे, विदा हुए पिता , उतारो बुद्ध।

एक कविता - 'कितने ही लोग' करोना महामारी में दूर दूर बसे बेटे बेटियों को घर लौटने में कितनी दहशत भरी मुश्किलों का सामना करना पडा। सब परिवार जन आकुल हैं पुत्र के लिए प्रतीक्षारत है कि वो अकुशल घर लौट आए और फिर कहीं न जाए। इन विकट परिस्थितियों के बाद भी जीने की ललक जीवित है कि अभी कुछ शेष है जीने के लिए ।

आरंभ की पंक्तियाँ ---

साथी तुम कहना सब हाल
वहाँ कैसे क्या हो रहा है
वह सब जो गए थे शहरों से
खाने कमाने
कुशल से तो हैं

क्या सच है ----क्या झूठ --

तुम आना तो बताना --

अंत में कवयित्री कहतीं हैं-

बंद हैं मंदिरों के दरवाजे
लेकिन हमारी मडैई के द्वार खुले हैं
कब पहुंचेगा शांता का बेटा अपने उस गाँव में
जहाँ से उसे वापस न लौटना पडे।

अब अंत में सारी आपदाओं और विपदाओं को हरने , मानव से मानवता का क्षरण न हो इस लिए समभाव की आवश्यकता है, किसी देवदूत की जरूरत है।

'उतरो बुद्ध' की अंतिम दो पंक्तियाँ ---

उतरो बुद्ध
सूख न जाए करुणा की सरिता
प्रतीक्षा में है धरा

अधूरे न रह जाएँ प्रश्न----
यशोधरा के

कहने का तात्पर्य यह है कि शब्दों ने नए नए रूपधर कर भावों अनुभवों लोक जीवन मन की संवेदना को भिन्न भिन्न रूपों में ढाल दिया और शब्द बहुरूपिये हो गए।।।।

****